नारी समस्या को चित्रित करता 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक

डॉ0 कामना कौशिक
विभागाध्यक्षा, हिन्दी विभाग, सी.एम.के. नेश्नल पी.जी.
गर्ल्ज महाविद्यालय, सिरसा, हरियाणा, भारत ।
Email : kamnacmk78@gmail.com

सारांश

हिन्दी साहित्य जगत में श्री जयशंकर प्रसाद जी का नाम बड़े ही आदर व सत्कार के साथ लिया जाता है। इन्होनें साहित्य की विभिन्न विधाओं में सफल लेखनी चलाई। इन्हीं विधाओं में से नाटक विधा के अन्तर्गत हम प्रसाद जी द्वारा विरचित 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक का अध्ययन करेंगे। 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक की प्रमुख नायिका ध्रुवस्वामिनी आधुनिक नारी का प्रतिनिधि बनकर प्रस्तुत हुई है। उसकी समस्या केवल उस युग की समस्या नहीं है, अपितु आधुनिक युग में नारी जगत में आज भी ज्यों की त्यों बनी हुई है। ध्रुवस्वामिनी नायिका का अमेल–विवाह, संबंध–विच्छेद और पुर्न–विवाह को प्रसाद जी ने बड़े ही मार्मिक व आकर्षक रूप में ध्रुवस्वामिनी नाटक में प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत नाटक में हम नारी के विवाह की समस्या और समाधान का अध्ययन करेंगे, उससे पूर्व प्रसाद जी के व्यक्तित्व का संक्षिप्त परिचय देना मैं अनिवार्य समझती हूँ।

प्रस्तावना

छायावादी काव्यधार के आधार स्तम्भ श्री जयशंकर प्रसाद जी महान कवि और महान नाटककार के रूप में विख्यात है। अपनी बहुमुखी प्रतिभा से इन्होनें साहित्य की विभिन्न विधाओं यथा काव्य, नाटक, कहानी, उपन्यास, निबन्ध, चम्पू तथा जीवन चरित्र आदि को समृद्ध करने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। श्री जयशंकर प्रसाद का जन्म सम्वत् 1946 विक्रमी को काशी में हुआ। माता–पिता तथा ज्येष्ठ भ्राता की असामयिक मृत्यु के कारण परिवार का सारा दायित्त्व इनके कन्धों पर आ गया। घर की आर्थिक स्थिति चरमरा गई। कठिन परिश्रम के परिणामस्वरूप परिवार को ऋण के बोझ से मुक्त करा पाए। दुर्भाग्य से वैवाहिक जीवन में प्रसाद जी को दो बार पत्नी वियोग झेलना पड़ा। 'यक्ष्मा' रोग का शिकार होकर प्रसाद जी सन् 1937 में 48 वर्ष की आयु में इस संसार से विदा हो गए। शैव दर्शन से प्रभावित, भारतीय संस्कर्षति और साहित्य के पुजारी जयशंकर प्रसाद जी के भव्य और आकर्षक व्यक्तित्व का चित्र प्रस्तुत करते हुए श्री रामनाथ सुमन जी कहते हैं–

''व्यक्ति की दृष्टि से प्रसाद एक उच्चकोटि के पुरूष थे। वह कवि होने के कारण उदार, व्यापारी होने के कारण व्यवहारशील, पुराणशास्त्र आदि संस्कृत काव्य के विशेष अध्ययन के कारण प्राचीनता की ओर झुके हुए, भारतीय आचारों और सभ्यताओं के प्रति ममता रखने वाले

तथा एक सीमा तक पाश्चात्य सभ्यता के गुणों के प्रशंसक थे।.....''[1]

संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी आदि भाषाओं में महारथ हासिल करने वाले बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न जयशंकर प्रसाद ने विभिन्न विधाओं में सफलतापूर्वक अपनी लेखनी चलाई।

1. काव्य–कृतियाँः 'चित्राधार', 'करूणालय', 'कानन कुसुम', 'महाराणा का महत्त्व', 'आँसू', 'प्रेम पथिक', 'लहर', 'झरना' और 'कामायनी'
2. उपन्यासः 'कंकाल', 'तितली' तथा 'इरावती' (अपूर्ण)
3. कहानी संग्रहः 'छाया', 'प्रतिध्वनि', 'आकशदीप' 'आँधी' तथा 'इन्द्रजाल'
4. नाटकः 'चन्द्रगुप्त', 'अजातशत्रु', 'स्कन्दगुप्त', 'राज्यश्री', 'ध्रुवस्वामिनी', 'कामना', 'जन्मेजय का नागयज्ञ', 'सज्जन', 'विशाख', 'करूणालय', 'कल्याणी–परिणय', 'विक्रमादित्य' तथा 'एक घूँट' आदि
5. निबन्ध संग्रहः 'काव्य और कला' तथा अन्य निबन्ध
6. जीवन–चरित्रः 'चन्द्रगुप्त मौर्य।
7. चम्पूः 'उर्वशी'

प्रसाद जी मुख्यतः ऐतिहासिक नाटककार के रूप में प्रतिष्ठित है। प्रसाद जी ने नवीन और प्राचीन के बीच इस प्रकार का समझौता किया कि भारतीय सभ्यता और संस्कृति पुनर्जिवित हो सके। इन्होनें ऐतिहासिक पात्रों की सृष्टि इस प्रकार की है कि पात्रों के माध्यम से पूरा युग ही सजीव होकर सामने उपस्थित हो जाता है। प्रसाद जी ने इतिहास की प्राचीन घटनाओं के ताने–बाने में युगीन समस्याओं और समाधान को सफल रूप से प्रस्तुत किया है। 'ध्रुवस्वामिनी' प्रसाद जी का एक ऐतिहासिक नाटक है, जिसमें कल्पना के कई रंग भर कर इसके कथानक को तीन अंकों में समेटा गया है। इसके कथानक का मुख्य आधार गुप्तवंश का बनाया है। प्रसाद जी ने गुप्तयुगीन प्रमुख घटना पर प्रकाश डालते हुए अधिकारों की समस्या को उठाया है। नाटक के तीनों अंक क्रमशः कथा के आरम्भिक, मध्य और अन्तिम अंश का सूचक है। नाटक का आरम्भ संघर्ष से होता है। यह संघर्ष आन्तरिक व बाह्य दोनों तरफ से है। नाटक की नायिका 'ध्रुवस्वामिनी' का खड्गधारिणी के साथ किया गया वार्तालाप इसी अन्तर्द्वन्द्व की अभिव्यक्ति करता है। इसी प्रथम अंक में हमें ध्रुवस्वामिनी के मन के अन्तर्द्वन्द्व से ज्ञात होता है कि वह रामगुप्त से घृणा करती है तथा चन्द्रगुप्त के प्रति उसके मन में प्रेमभाव के संकेत व्यक्त करती है। नाटक के दूसरे अंक में प्रारम्भिक घटना और कार्य–विकास तथा संघर्ष की स्थिति तक कथानक पहुँच जाता है। शकराज, ध्रुवस्वामिनों को प्राप्त करने के लिए व्यग्र एवं बेचैन है। वह अपनी पत्नी कोमा के प्रति अनन्य भाव नहीं रखता। वह उसे विलास की सामग्री समझता है। रामगुप्त ने शकराज की सभी शर्ते स्वीकार कर ली है। यह सुनकर शकराज फूला नहीं समाता परन्तु कोमा अत्यन्त क्षुब्ध हो उठती है। युद्ध में शकराज की मृत्यु और चन्द्रगुप्त तथा ध्रुवस्वामिनी की जय–जयकार के साथ दूसरा अंक समाप्त हो जाता है। तीसरे अंक में दर्शाया गया है कि रामगुप्त विजय का समाचार सुनकर वहाँ आ जाता है तथा अपने सैनिकों को चन्द्रगुप्त तथा सामन्त कुमारों को बन्दी

बनाने के लिए कहता है। ध्रुवस्वामिनी की प्रेरणा से चन्द्रगुप्त अपनी 'लोह–श्रृंखलाओं को तोड़कर अपने अधिकारों की मांग करता है। शिखरस्वामी समय की गति पहचानकर रामगुप्त को परिषद् की आज्ञा मानने के लिए समझाता है। अयोग्य एवं कायर रामगुप्त चन्द्रगुप्त को कटार से मारने का असफल प्रयास करता है। सामन्त कुमार रामगुप्त पर प्रहार करके चन्द्रगुप्त की रक्षा करता है। चन्द्रगुप्त और ध्रुवस्वामिनी की जय–जयकार के साथ नाटक समाप्त हो जाता है।

'ध्रुवस्वामिनी' नाटक एक उद्देश्यपूर्ण नाटक है। इसमें मुख्य रूप से नारी जीवन की विभिनन समस्याएँ तथा तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों में राज्याधिकारी की समस्या को उठाया गया है। प्रस्तुत आलेख में मैं नारी जीवन की समस्याओं पर प्रकाश डालने का प्रयास कर रही हूँ। नारी की समस्या आदिकाल से चली आ रही है। घर में, समाज में, धर्म में, राजनीति में तथा जीवन के अन्य क्षेत्रों में नारी का क्या स्थान है? प्रस्तुत नाटक 'ध्रुवस्वामिनी' में नारी की समस्याओं का उल्लेख करते हुए समाधान भी प्रस्तुत किया गया है।

'ध्रुवस्वामिनी' नाटक की सम्पूर्ण कथा ध्रवस्वामिनी के इर्द–गिर्द घूमती है। नाटक में नायिका के पद की अधिकारिणी ध्रुवस्वामिनी ही नाटक की प्रमुख समस्या का उद्घाटन भी करती है। नाटक के प्रारम्भ में उसे राजबन्दिनी, विवश नारी के रूप में दिखाया गया है।ध्रुवस्वामिनी अपने अमेल–विवाह से असंतुष्ट है क्योंकि जबरन विवाह होने के कारण एक तो वह उसे अपने पति के रूप में स्वीकार नहीं कर पा रही थी, दूसरा यह कि उसका पति रामगुप्त अयोग्य, कायर व विलासी प्रवर्षत्ति का था। वह अपनी पत्नी से न तो प्यार करता था, न ही उसे मान–सम्मान देता था, अपितु उसे संदिग्ध दृष्टि से देखता था। यही कारण है कि ध्रुवस्वामिनी उसे अपने जीवन साथी के रूप में आंतरिकता से स्वीकार नहीं कर पाई। यहीं कारण है कि जब वह अपने आपको असहाय पाती है और मृत्यु पर विचार करने लग जाती है तभी चन्द्रगुप्त को अपने सामने देखकर वह अपने सुखद पलों को याद करते हुए कहती है–

''कितना अनुभूतिपूर्ण था वह एक क्षण का आलिंगन! कितने संतोष से भरा था! नियति ने अज्ञात भाव से मानो लू से तपी हुई वसुधा को क्षितिज के निर्जन में सायंकालीन शीतल आकाश से मिला दिया हो। (ठहरकर) जिस वायुविहीन प्रदेश में उखड़ी हुई साँसों पर बंधन हो–अर्गला हो, वहाँ रहते–रहते यह जीवन असह्य हो गया था। तो भी मरूँगी नहीं। संसार के कुछ दिन विधाता के विधान में अपने लिए सुरक्षित करा लूँगी। तुमने वहीं किया, जिसे मैं बचाती रही।''[2]

वह अपने वैवाहिक जीवन से दुखी व असन्तुष्ट है। उसका जीवन एक कैदी की भाँति है–

''अरे, यह क्या, मेरे भाग्य–विधाता! यह कैसा इन्द्रजाल? उस दिन राजमहापुरोहित ने कुछ आहुतियों के बाद मुझे जो आर्शीवाद दिया, क्या वह अभिशाप था? इस राजकीय अन्तःपुर में सब जैसे एक रहस्य छिपाये हुए चलते है, बोलते हैं और मौन हो जाते है।''[3]

रामगुप्त अयोग्य, मद्यप, विलासी व कायर शासक है। ध्रुवस्वामिनी का रामगुप्त से अमेल विवाह उसकी अन्तरात्मा को कचोह को कचोट रहा है। वह विवश भाव से सब सहती है। शकराज के सन्धि प्रस्ताव को स्वीकारते हुए जब रामगुप्त उसे शकराज को सौंपने के लिए तैयार

हो जाता है। तब अपनी विवशता व दुख को प्रकट करते हुए चन्द्रगुप्त से कहती है–

''नहीं, अभी आत्महत्या नहीं करूँगी। जब तुम आ गए हो, तो थोड़ा ठहरूँगी। यह तीखी छुरी इस अतृप्त ह्रदय में विकासोन्मुख कुसुम में– विषैले कीट के डंक की तरह चुभा दूँ या नहीं– इस पर विचार करूँगी। यदि नहीं, तो मेरी दुर्दशा का पुरस्कार क्या कुछ और है? हाँ, जीवन के लिए कृतज्ञ, उपकृत और आभारी होकर किसी के अभिमानपूर्ण आत्म–विज्ञापन का भार ढोती रहूँ– यही क्या विधाता का निष्ठुर विधान हैं छुटकारा नहीं, जीवन नियति के कठोर आदेश पर चलेगा ही! तो क्या यह मेरा जीवन भी? अपना नहीं है?''[4]

ध्रुवस्वामिनी रामगुप्त के जीवन तथा उसके राज्य में अपनी स्थिति को स्पष्ट करते हुए कहती है–

''यह तो मैं जानती हूँ कि इस राजकुल के अन्तपुरः में मेरे लिए न जाने कब से नीरव अपमान संचित रहा जो मुझे आते ही मिला, किन्तु क्या तुम–जैसी दासियों से भी वहीं मिलेगा? इसी शैलमाला की तरह मौन रहने का अभिनय तुम न करो, बोलो।''[5]

रामगुप्त के साथ ध्रुवस्वामिनी के सम्बन्ध कैसे है? उसे कितना पत्नी अधिकार प्राप्त हुआ है? ध्रुवस्वामिनी अपनी सेवा में नियुक्त खड्गधारिणी से कहती है–

''मैं तो अपने ही प्राणों का मूल्य नहीं समझ पाती। मुझ पर राजा का कितना अनुग्रह है, यह भी मैं आज तक न जान सकी। मैनें तो कभी उनका मधुर संभाषण सुना ही नहीं। विलासिनियों के साथ मदिरा में उन्मत्त, उन्हें अपने आनंद से अवकाश कहाँ।''[6]

नारी मन बड़ा ही कोमल होता है। वह ममता, त्याग व बलिदान से परिपूर्ण होता है। वह प्रेम का अथाह सागर अपने अंदर समाहित किए रखती है। एक बार वह जिसे जीवन में प्यार करने लग जाती है उसे आजीवन प्यार ही करती रहती है। चाहे बदले में उसे कितनी ही उपेक्षाओं का सामना क्यों न करना पड़े। अपने पति शकराज के द्वारा कोमा उपेक्षा व तिरस्कार प्राप्त करती है तब उसके दुःख को समझते हुए कोमा का पिता उसे शकराज को छोड़ अपने साथ चलने को कहता है, तब कौमा अपने पिता से कहती है–

''तोड़ डालूँ पिताजी! मैनें जिसे अपने आँसुओं से सींचा, वहीं दुलारभरी वल्लरी, मेरे आँख बंद कर चलने में मेरे ही पैरों से उलझ गई है। दे दूँ एक झटका– उसकी हरी–हरी पत्तियाँ कुचल जाएं ओर वह छिन्न होकर धूल में लोटने लगे? ना, ऐसी कठोर आज्ञा न दो।''[7]

कोमा को अपने पति शकराज से घृणा और तिरस्कार ही प्राप्त हुआ है। इन सबके बावजूद भी वह अपने पति को बेहद प्यार करती है तथा उसका प्यार पाने के लिए लालायित रहती है। मन्दाकिनी, कोमा की करूणाजनक स्थिति पर विचारते हुए कहती है–

''स्त्रियों के इस बलिदान का कोई मूल्य नहीं, कितनी असहाय दशा है। अपने निर्बल और अवलंब खोजने वाले हाथों से वह पुरूष के चरणों को पकड़ती है और वह सदैव इनको तिरस्कार, घृणा और दुर्दशा की भिक्षा से उपकृत करते है– तब भी ये बावली क्या मानती है?''[8]

ध्रुवस्वामिनी अपनी व कोमा की स्थिति पर चिन्तन–मनन करते हुए मन्दाकिनी को कहती है–

''भूल है– भ्रम है (ठहरकर) किन्तु उसका कारण भी है। पराधीनता की एक परम्परा सी, उनकी नस–नस में, उनकी चेतना में, न जाने किस युग से घुस गई है। उन्हें समझकर भी भूल करनी पड़ती है। क्या वह मेरी भूल न थी, जब मुझे निर्वासित किया गया, तब मैं आत्म–मर्यादा के लिए कितनी तड़प रही थी और राजाधिराज रामगुप्त के चरणों में रक्षा के लिए गिरी, पर कोई उपाय चला? नहीं, पुरूषों की प्रभुता का जाल मुझे अपने निर्दिष्ट पथ पर ले ही आया।''[9]

'ध्रुवस्वामिनी' नाटक में युगों से चली आ रही धारणा 'नारी' पुरूष के लिए ही है, इस धारणा को नायिका ध्रुवस्वामिनी के द्वारा भंग होते दिखाया गया है। रामगुप्त अत्याचारी, नपुंसक, कायर, मर्यादाहीन और अनाचारी पति है। वह ध्रुवस्वामिनी की इच्छा के विरूद्ध छल–कपट से बलपूर्वक विवाह कर लेता है। अपने कर्तव्य से पलायन करते हुए राष्ट्ररक्षा की आड़ में शकराज के सन्धि प्रस्ताव को स्वीकारते हुए उसे उपहार में शकराज को सौंपने का फैसला ध्रुवस्वामिनी को सुना देता है। ध्रुवस्वामिनी अपनी रक्षा के लिए रामगुप्त के आगे मिन्नते करती है, गिड़गिड़ाती है, यहाँ तक अपने आप को रामगुप्त को सौपने को भी तैयार हो जाती है। परन्तु रामगुप्त टस से मस न हुआ। तब ध्रुवस्वामिनी रामगुप्त के फैसले को मानने से इन्कार कर देती है और वह आक्रोश में आकर रामगुप्त को फटकारते हुए कहती है–

''पुरूषों ने स्त्रियों को पशु–सम्पति समझकर उन पर अत्याचार करने का जो अभ्यास बना लिया है, वह मेरे साथ नहीं चल सकता यदि तुम मेरी रक्षा नहीं कर सकते, अपने कुल की मर्यादा, नारी का गौरव नहीं बचा सकते– तो मुझे बेच भी नहीं सकते। हाँ, तुम लोगों को आपत्ति से बचाने के लिए मैं स्वयम् यहाँ से चली जाऊँगी।''[10]

भारतीय समाज एक पुरुष प्रधान समाज है। जहाँ स्त्रियाँ अपनी रक्षा के लिए और जरूरतों के लिए पुरुष पर आश्रित रहती है। पुरुष स्त्रियों के प्रति हमेशा से ही अपने संकुचित सोच के कारण उसे पशु तुल्य आँकता है तथा उस पर मन–माना शोषण करता है। रामगुप्त जब अपनी पत्नी को शकराज को देने के लिए तैयार हो जाता है तब ध्रुवस्वामिनी अपनी रक्षा अपने आप करने का फैसला लेती है।

''नहीं, मैं अपनी रक्षा स्वयम् करूँगी। मैं उपहार देने की वस्तु हूँ शीतलमणि नहीं हूँ। मुझमें रक्त की तरल लालिमा है। मेरा ह्रदय उष्ण है और उसमें आत्म–सम्मान की ज्योति है। उसकी रक्षा मैं ही करूँगी।''[11]

ध्रुवस्वामिनी मधुर, त्यागी, विनीत, युवा, प्रज्ञावान, उत्साही, तेजस्वी और दृढ़ प्रतिज्ञ गुण से सम्पन्न नायिका है। वह विषम परिस्थितियों से घबराने वाली नायिका नहीं है, वह डटकर सामना करती है। वह अपने राक्षस विवाह का खण्डन करती है। वह पुरोहित को धर्म का पाठ पढ़ाती है तथा उसे सत्य का साथ देने के लिए प्रेरित करती है। ध्रुवस्वामिनी द्वारा अमेल विवाह के विरूद्ध आवाज उठाने पर पुरोहित कहता है–

''विवाह की विधि ने देवी ध्रुवस्वामिनी और रामगुप्त को एक भ्रांतिपूर्ण बंधन में बांध दिया है। धर्म का उद्देश्य इस तरह पद दलित नहीं किया जा सकता। माता और पिता के प्रमाण के कारण से धर्म–विवाह केवल परस्पर द्वेष से टूट नहीं सकते, परन्तु यह संबंध उन प्रमाणों से भी

विहीन है और भी। (रामगुप्त को देखकर) यह रामगुप्त मृत और प्रव्रजित तो नहीं, पर गौरव से नष्ट, आचरण से पतित और कर्मो से राजकिल्विशी–क्लीव है। ऐसी अवस्था में रामगुप्त का ध्रुवस्वामिनी पर कोई अधिकार नहीं।''[12]

मन्दाकिनी भी ध्रुवस्वामिनी से प्रेरित होकर निडरता के साथ अपना मत रखते हुए कहती है–

''भगवान ने स्त्रियों को उत्पन्न करते ही अधिकारों से वंचित नहीं किया है। किन्तु तुम लोगों की दस्युवृत्ति ने उन्हें लुटा है। इस परिषद् से मेरी प्रार्थना है कि आर्य समुन्द्रगुप्त का विधान तोड़कर जिन लोगों ने राजकिल्विष किया हो उन्हें दण्ड मिलना चाहिए।''[13]

राजपुरोहित, ध्रुवस्वामिनी को रामगुप्त से अमेलराक्षस विवाह से आजाद कराता है। धर्मशास्त्र के अनुसार ध्रुवस्वामिनी का चन्द्रगुप्त के साथ पुनर्लग्न किया जाता है। ध्रुवस्वामिनी और चन्द्रगुप्त के विवाह को वह धर्मशास्त्र के अनुकूल ठहराता हैं अतः स्पष्ट है कि भारत के धर्मशास्त्रों में विवाह–मोक्ष की समस्या का समाधान है। राजपुरोहित इसका संकेत देते हुए कहता है–

''श्री कृष्ण ने अर्जुन को क्लीव किसलिए कहा? जिसे अपनी स्त्री को दूसरे की अंकगामिनी बनने के लिए भेजने में कुछ संकोच नहीं वह क्लीव नही तो और क्या है? मैं स्पष्ट करता हूँ कि धर्मशास्त्र रामगुप्त से ध्रुवस्वामिनी के मोक्ष की आज्ञा देता है।''[14]

डॉ० जगन्नाथ प्रसाद जी ने नाटक में प्रस्तुत नारी समस्या और समाधान पर अपना मत रखते हुए कहा है– ''वर्तमान समस्या नाटककारों की भाँति 'प्रसाद' ने केवल समस्या ही खड़ी नहीं की है वरन् उसके उत्तर की व्यवस्था भी की है। इसमें तर्क और बुद्धि का योग जहाँ तक सम्भव है वह भी उपस्थित किया गया है। प्रसाद ने प्रथम समस्या का उत्तर दिया– मोक्ष और दूसरे का परिवर्तन। इस मोक्ष और परिवर्तन ने जिस कल की अन्विति उत्पन्न हुई उसी में भारतीयता का सच्चा स्वरूप दिखाई पड़ता है।''[15]

निष्कर्षतयः 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक में ध्रुवस्वामिनी नाटक की नायिका के चरित्र के माध्यम से प्रसाद जी ने नारी जीवन की प्रमुख समस्याओं को उजागर किया गया है। ध्रुवस्वामिनी आधुनिक नारी की प्रतिनिधि बनकर आई है। उसकी समस्या आधुनिक नारी जगत की समस्या है। ध्रुवस्वामिनी अपनी व्यावहारिक बुद्धि के बल पर चन्द्रगुप्त को अपनी वाग्दत्ता और अपने पिता द्वारा दिए गए अधिकारों को प्राप्त करने के लिए प्रेरित करती है। रामगुप्त से मुक्ति पाने और पुनर्लग्न में सफलता प्राप्त करना उसकी कुशाग्र बुद्धि का ही परिणाम है। वह भारतीय नारी के सच्चे आदर्श को स्थापित करती है। वह जीवन के समतल में अमृत की धारा की तरह प्रवाहित होती है तथा पुरूषों को श्रेष्ठ कार्य के लिए प्रेरणा देती है।

सन्दर्भ

1. *'आधुनिक हिन्दी महाकाव्यों का समाजशास्त्रीय अध्ययन'* : डॉ० विश्वबन्धु शर्मा, सद्भावना प्रकाशन, दिल्ली, पृ० 9, **1982**
2. *'ध्रुवस्वामिनी'* : जयशंकर प्रसाद, खाटू श्याम प्रकाशन, रेलवे रोड, रोहतक, पृ० **21–22,** 2013

3. *'ध्रुवस्वामिनी'* : जयशंकर प्रसाद, खाटू श्याम प्रकाशन, रेलवे रोड़, रोहतक, पृ० **3—4**, 2013
4. *'ध्रुवस्वामिनी'* : जयशंकर प्रसाद, खाटू श्याम प्रकाशन, रेलवे रोड़, रोहतक, पृ० **18**, 2013
5. *'ध्रुवस्वामिनी'* : जयशंकर प्रसाद, खाटू श्याम प्रकाशन, रेलवे रोड़, रोहतक, पृ० **3**, 2013
6. *'ध्रुवस्वामिनी'* : जयशंकर प्रसाद, खाटू श्याम प्रकाशन, रेलवे रोड़, रोहतक, पृ० **5**, 2013
7. *'ध्रुवस्वामिनी'* : जयशंकर प्रसाद, खाटू श्याम प्रकाशन, रेलवे रोड़, रोहतक, पृ० **32**, 2013
8. *'ध्रुवस्वामिनी'* : जयशंकर प्रसाद, खाटू श्याम प्रकाशन, रेलवे रोड़, रोहतक, पृ० **42**, 2013
9. *'ध्रुवस्वामिनी'* : जयशंकर प्रसाद, खाटू श्याम प्रकाशन, रेलवे रोड़, रोहतक, पृ० **42**, 2013
10. *'ध्रुवस्वामिनी'* : जयशंकर प्रसाद, खाटू श्याम प्रकाशन, रेलवे रोड़, रोहतक, पृ० **15**, 2013
11. *'ध्रुवस्वामिनी'* : जयशंकर प्रसाद, खाटू श्याम प्रकाशन, रेलवे रोड़, रोहतक, पृ० **17**, 2013
12. *'ध्रुवस्वामिनी'* : जयशंकर प्रसाद, खाटू श्याम प्रकाशन, रेलवे रोड़, रोहतक, पृ० **49**, 2013
13. *'ध्रुवस्वामिनी'* : जयशंकर प्रसाद, खाटू श्याम प्रकाशन, रेलवे रोड़, रोहतक, पृ० **48**, 2013
14. *'ध्रुवस्वामिनी'* : जयशंकर प्रसाद, खाटू श्याम प्रकाशन, रेलवे रोड़, रोहतक, पृ० **49—50**, 2013
15. *'आधुनिक हिन्दी महाकाव्यों का समाजशास्त्रीय अध्ययन'* : डॉ० विश्वबन्धु शर्मा, सद्भावना प्रकाशन, दिल्ली, पृ० **7**, 1982